# कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा 'आधुनिक विश्व की चुनौतियां : भारतविद्या के माध्यम से समाधान' विषय पर आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी के उद्घाटन के अवसर पर भारत के राष्ट्रपति, श्री प्रणब मुखर्जी का अभिभाषण

**करुक्षेत्र, हरियाणा : 09.04.2013**

मुझे आज महाभारत और भगवद् गीता की इस भूमि में आकर बहुत प्रसन्नता हो रही है। मुझे 'आधुनिक विश्व की चुनौतियां : भारतविद्या के माध्यम से समाधान' विषय पर कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी का उद्घाटन करके विशेष खुशी हो रही है।

सरसरी तौर पर, यह विषय कुछ लोगों को अप्रासंगिक लग सकता है। परंतु यह आधुनिक समय के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है तथा यह आज की बहुत सी समस्याओं का समाधान सुझा सकता है। इसके अलावा विश्वविद्यालय आमतौर पर संगोष्ठी के लिए इतने जटिल तथा चुनौतीपूर्ण विषय का कम ही चयन करती है। मैं कुलपति तथा उनकी टीम को इस निर्णय के लिए बधाई देना चाहूंगा।

भारतविद्या अपनी समग्रता में भारतीय संस्कृति का अध्ययन है, जिसमें भारतीय भाषाएं, इसकी कलाएं, प्रथाएं, विश्वास, धर्म तथा अन्य संबद्ध पहलू शामिल होते हैं। परंतु इस विधा को 19वीं सदी से ही महत्त्व दिया गया।

भारतविद्या की शुरुआत, 1784 में सर विलियम जोन्स द्वारा कलकत्ता में स्थापित एशियाटिक सोसाइटी से मानी जा सकती है। इसका दूसरा महत्त्वपूर्ण संस्थान 1893 में तत्कालीन बड़ौदा के महाराजा द्वारा स्थापित ओरिएंटल इंस्टिट्यूट रहा। इस संस्थान को हिंदू विधि, बौद्ध तथा जैन धर्म के विभिन्न पहलुओं पर मौलिक रचनाएं प्रकाशित करने का श्रेय जाता है। इसके बाद से कई भारतविद्या संस्थान स्थापित हो चुके हैं।

1882 में मद्रास में स्थापित थियोसॉफिकल सोसाइटी भी ऐसा ही एक संस्थान है, जिसने भारतविद्या में मौलिक अनुसंधान किए हैं। इस आंदोलन को ए.ओ. ह्यूम तथा गोपाल कृष्ण गोखले जैसे प्रख्यात व्यक्तियों का सहयोग मिला।

थियोसॉफिकल सोसाइटी के भारतविद्या संबंधी अध्ययनों को तब प्रोत्साहन मिला जब 1893 में एनी बेसेंट इस संगठन में काम करने के लिए आई। उन्होंने भारतीय समाज और इसकी संस्कृति से संबंधित बहुत सी पुस्तकों की रचना करके भारतविद्या अध्ययनों को नई दिशा दी। शीघ्र ही भारतविद्या के बारे में पूरे यूरोप और खासकर फ्रांस और जर्मनी में रुचि पैदा हुई। हार्वर्ड तथा येल जैसे प्रसिद्ध अमरीकी विश्वविद्यालयों में भारतविद्या केंद्र हैं।

भारतविद्या में बढ़ती रुचि के बावजूद भारत और विदेश दोनों स्थानों में इसमें बहुत काम नहीं हो पाया। भारत में, इसका कारण, भारतविद्या अध्ययन में लगे व्यक्तियों के लिए रोजगार अवसरों में कमी तथा पश्चिमी विचारधारा का प्रभाव माना जाता है। परिणामस्वरूप, साहित्य में समृद्ध होते हुए भी भारतविद्या, पश्चिमी विचारधाराओं और सिद्धांतों का सामना करने में सफल नहीं हुई।

परिणामस्वरूप, अंग्रेजी तथा पश्चिम दर्शन पर आधारित अनुसंधान के कारण यह एक-आयामीय हो गई। पश्चिम की नजरों से विश्व को देखने के कारण भारतीय संस्कृति के प्रति समझ विकृत हुई, जिसे एक लेखक ने 'पृथ्वी का यूरोपीयकरण' कहा है।

यूरोप में बहुत से विद्वानों ने भारतविद्या को प्रागैतिहासिक काल से संबंधित मानकर इसकी प्रासंगिकता को कम कर दिया। परिणामस्वरूप, भारत द्वारा औषधि, गणित तथा खगोलशास्त्र के क्षेत्र में की गई प्रगति को उचित सम्मान नहीं मिल पाया।

परंतु भौतिकता पर केंद्रित इस विश्व में जहां बहुत से लोग अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए कोई भी साधन अपनाने को उचित मानते हों, भारतीय संस्कृति की शिक्षा एक वैकल्पिक मॉडल प्रदान कर सकती है। हमारी संस्कृति का एक समृद्ध इतिहास है। हमारे प्रयासों की विरासत इस आधुनिक विश्व की भलाई के लिए समर्पित है।

उदाहरण के लिए, भगवद् गीता के नीति संबंधी उपदेश विपरीत परिस्थितियों में भी सदाचार के रास्ते पर चलने की जरूरत पर बल दे सकते हैं। पांडवों और कौरवों के बीच युद्ध की शुरुआत से पहले भगवान श्रीकृष्ण ने दुविधाग्रस्त अर्जुन को भगवद् गीता के पारलौकिक उपदेश दिए और सन्मार्ग पर चलने तथा सच्चे योद्धा का धर्म बताया। इससे उन्हें निजी स्वार्थों से ऊपर उठकर अपने कर्तव्यों को पूरा करने की बाध्यता का अहसास हुआ। इसका संदेश सार्वभौमिक है और यदि इसका अनुपालन किया जाए तो आज विश्व के सामने विभिन्न तरह के संघषों को रोका जा सकता है।

मित्रो, हमारी भाषाएं और साहित्य हमारी साझा विरासत है। संस्कृत तथा तमिल जैसी प्राचीन भाषाएं, जिनकी समृद्ध मौलिक साहित्यिक तथा व्याकरणिक परंपराएं है, विश्व के सबसे प्राचीन समय से विद्यमान भाषाएं हैं।

इन भाषाओं की पावन रचनाओं ने कुछ हद तक आधुनिक हिंदू धर्म का विकास किया है। ये भाषाएं, ग्रीक, लेटिन, चीनी तथा फारसी जैसे विश्व के अन्य महान साहित्यों के समान महत्त्वपूर्ण हैं।

विभिन्न भारतीय भाषाओं तथा भारतीय दर्शन में निहित सूचना तथा उपदेशों के भंडार से व्यक्तियों तथा राष्ट्रों, दोनों को उनके सवालों के उत्तर प्राप्त हो सकते हैं। भौतिक जीवन को उद्वेलित करने वाले विभिन्न प्रश्नों के उत्तर भारत के प्राचीन साहित्यिक ग्रंथों में पाए जा सकते हैं।

मित्रो, धर्म और अर्थ की प्राप्ति सार्थक जीवन जीने के लिए महत्त्वपूर्ण लक्ष्य हैं। धर्म विधि भी है और कर्तव्य भी। सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने तथा व्यक्ति के नैतिक विकास की दिशा में जो भी प्रयास किए जाते हैं वे धर्म हैं। इसके पालन से सभी को शांति तथा सद्भावना की प्राप्ति होती है।

अर्थ जीवन की बुनियादी जरूरत है। एक अच्छा तथा सार्थक जीवन जीने के लिए आर्थिक समृद्धि इसके मूल में है। अर्थ का महत्त्व बताते हुए डॉ. राधाकृष्णन ने लिखा था : "भारत में निर्धनता और विपन्नता कभी भी आदर्श नहीं मानी गई। आध्यात्मिक जीवन केवल कुछ ऐसे समुदायों में पूर्ण विस्तार पा सका, जिन्होंने कुछ न कुछ सीमा तक विपन्नता से मुक्ति पा ली थी। जो व्यक्ति विपन्नता और भूख से व्याकुल हों वे केवल बुनियादी स्तर को छोड़कर धार्मिक नहीं हो सकते। आर्थिक असुरक्षा तथा व्यैक्तिक स्वतंत्रता का संग नहीं हो सकता"। इस सच्चाई की स्वीकृति लोगों के बीच असमानता कम करने में सहायक होगी।

हमें यह ध्यान रखना होगा कि भारत की दीर्घकालीन परंपरा में अर्थ अथवा धन कभी भी अपने आप में साध्य नहीं रहा बल्कि केवल साधन था। धन केवल मूलभूत जरूरतों को पूरा करने के लिए एक माध्यम होना चाहिए न कि एक ऐसा लक्ष्य जिसकी प्राप्ति में हम जुटे रहें। सन्मार्ग के खोजी को धन की प्राप्ति में अंधा नहीं होना चाहिए। यदि भौतिक समृद्धि की प्राप्ति को ही जीवन का अकेला लक्ष्य बना दिया जाए तो व्यक्ति सुख और दुख के दुश्चक्र में फंसा रह जाएगा। इस सार्वभौमिक सत्य की स्वीकृति धन के अंधानुकरण में कमी लाएगी और व्यक्तियों और राष्ट्रों में परोपकार की जरूरत का समावेश करेगी।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, आज विश्व व्यावहारिक राजनीति से प्रेरित लगता है। परंतु इससे स्थाई शांति नहीं बल्कि अस्थिरता पैदा होगी। जहां विभिन्न देश एक-दूसरे को परमाणु विनाश की धमकी दे रहे हैं वहां भारतीय संस्कृति और परंपराओं में अंतर्निहित विश्व बंधुत्व की संकल्पना इससे परिपूर्ण विश्व के सृजन को दिशा दे सकती है। 'वसुधैव कुटुम्बकम' की सूक्ति हमें संपूर्ण विश्व को एक परिवार की तरह मानने का निर्देश देती है। हमारी परंपरागत समझ विभिन्न समाजों और देशों के बीच मूलत: भ्रातृभाव और मैत्री का आह्वान करती है।

मित्रो, आज का विश्व बहुत से संघर्षों में फंसा हुआ है। हमारा जीवन आकांक्षाओं, प्रतिस्पर्धाओं तथा संघर्षों से भरा हुआ है। भौतिक समृद्धि का पीछा करने के कारण 'समर्थतम की ही जीत होगी' की लड़ाई में हर कोई एक-दूसरे का प्रतिस्पर्धी हो चुका है। परंतु जीतने की जरूरत और सबसे ऊपर पहुंचने की दौड़ में बहुत से व्यक्ति नैतिक मूल्यों की अनदेखी करते हैं। इस लड़ाई में हर कोई दुश्चिंता तथा अशांति से ग्रस्त होता है। इसके परिणाम मायावी होते हैं। हमारे प्राचीन ग्रंथ तथा

साहित्य में ऐसा बहुमूल्य ज्ञान मौजूद है जो कि जीवन, खुशी, शांति, समृद्धि, कर्तव्य तथा दायित्व जैसी धारणाओं का सही अर्थ बताते हैं।

ये समय पर खरे उतरे हुए तथा वर्तमान विश्व के लिए प्रासंगिक हैं। जीवन संबंधी सिद्धांतों पर शंकाओं और प्रश्नों के उत्तर पाने के लिए हमें अपने प्राचीन ग्रंथों का फिर से अध्ययन करना होगा। सांसारिक जीवन के दबावों की छंटनी करने के लिए खुद को तैयार करने के लिए अपने धर्मग्रंथों से प्राप्त बहुमूल्य ज्ञान पर भरोसा करना जरूरी है।

उन्नीसवीं सदी के महान व्यक्तियों और विचारकों ने समाज के सुधार तथा मानव चेतना की उन्नति में योगदान दिया। आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज तथा थियोसोफिकल सोसाइटी जैसे सामाजिक-धार्मिक आंदोलनों ने ऐसी दिशा दिखाई जो उस समय के युग के लिए नई थी परंतु हमारे प्राचीन दार्शनिक समझ के लिए प्राचीन थी। इन आंदोलनों ने लोगों के जीवन के दैनिक कार्यक्रम में सदाचार के तत्त्वों का समावेश करने पर जोर दिया।

मित्रो, समय आ गया है कि हम एक बार फिर से भारत की समृद्ध परंपराओं में निहित मूल्यों और उपदेशों को विश्व में फैलाएं। बच्चों को नैतिक शिक्षा प्रदान करने के महत्त्व का सही ढंग से समझना जरूरी है। एस. राधाकृष्णन के नेतृत्व में 1948-49 के विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की सिफारिशों में हमारे भारतीय विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में नैतिक शिक्षा प्रदान करने की सिफारिश की गई थी। हमारे शिक्षण संस्थानों में जीवन प्रबंधन संबंधी पाठ्यक्रम पढ़ाए जाने चाहिए, जिससे विद्यार्थियों को आधुनिकता की नई विश्व दृष्टि देते हुए जीवन के विभिन्न परिप्रेक्ष्यों के प्रति उनका अभिमुखीकरण किया जा सके।

मुझे उम्मीद है कि यहां आयोजित संगोष्ठी जैसी संगोष्ठियों से भारतविद्या के शिक्षण तथा उसे समझने की जरूरत को राष्ट्रीय विमर्श के केंद्र में लाना संभव हो पाएगा।

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय को वैश्विक मानकों के अनुरूप गुणवत्तायुक्त शिक्षा प्रदान करने के लिए जाना जाता है। इसका प्रमाण है राष्ट्रीय आकलन एवं प्रमाणीकरण परिषद, बेंगलूरु द्वारा इसे 'ए' ग्रेड दिया जाना।

खेलों तथा पाठ्येत्तर कार्यक्रमों को बढ़ावा देकर विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास पर विश्वविद्यालय का जोर दिया जाना प्रशंसनीय है। मुझे बताया गया है कि इसने अब तक नौ अर्जुन पुरस्कार, दो द्रोणाचार्य पुरस्कार तथा एक मेजर ध्यानचंद पुरस्कार विजेता तैयार किए हैं।

मैं इस पहल के लिए कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के प्रयासों की सराहना करता हूं। मैं आप सबके जीवन में सच्ची सफलता और खुशहाली की कामना करता हूं।

धन्यवाद,

**जय हिंद!**